प्रकृति एक शिक्षक

प्रीति राव

मेरी कहानी छोटी-छोटी शुरुआतों से बनी है। 80 के दशक में जब मैं किसी भी सामान्य लड़की की तरह बड़ी हो रही थी तो बेंगलूरु की हर छोटी-छोटी चीज़ से मुझे प्यार था – वहाँ की जलवायु से, वहाँ के लोगों से और संस्कृति से। मैं शुरू से ही वायुसेना की पायलट बनना चाहती थी। मेरा सपना बस पूरा होने के क़रीब था जब मैं बस एक इंच भर की दूरी से उससे चूक गई। अपने सपने को छोड़ने को मजबूर होने के बाद मैंने अनिच्छापूर्वक पढ़ाई जारी रखी और किसी तरह से एमबीए की पढ़ाई पूरी की। फिर ज़िन्दगी ने करवट बदली। हालाँकि मेरा कैरियर खूब अच्छा चल रहा था, लेकिन कॉरपोरेट्स के लिए काम करते हुए भीतर कुछ शून्यता-सी पैदा हो गई थी, कहीं कुछ कमी-सी थी। शादी के बाद मैंने काम छोड़ दिया, जिससे मुझे ख़ुद अपने लिए भरपूर समय मिला। बच्चे के जन्म ने धीरे-धीरे मेरे नज़रिए और सोच को बदल दिया। कुछ समय के लिए हम विदेश में रहे और खूब यात्राएँ की। इन सारे अनुभवों ने, जिनमें योग भी शामिल था, ख़ुद को और अपने आस-पास की दुनिया को समझने में मेरी मदद की। और फिर वह निर्णायक मोड़ आया। हमने भारत वापस लौटने का फैसला कर लिया। यह 2007 की बात है।

वापस लौटने के बाद पहली ही चीज़ जिस पर मेरा ध्यान गया, यह थी कि यह वह बेंगलूरु नहीं था जिसे मैं जानती थी। परिदृश्य जैसे नाटकीय रूप से बदल गया था। दुनिया भर में सॉफ्टवेयर और आईटी सेवाओं की बढ़ती हुई माँग के बीच बेंगलूरु दुनिया के नक्शे पर ख़ुद को एक पसन्दीदा आईटी शहर के रूप में स्थापित कर चुका था। एक बेहतर जीवन के वादे के साथ वह पूरे भारत और दुनिया भर से लोगों को अपनी तरफ़ खींच रहा था, लेकिन बेकाबू विकास और कमज़ोर अपशिष्ट प्रबन्धन की वजह से शहर पहचान में ही नहीं आ रहा था।

जैसे-जैसे मैंने गहराई में जाकर देखा तो बहुत सारी चीज़ें मेरे सामने आईं। चारों तरफ़ पेड़ बहुत ही कम रह गए थे, बारिश और तापमान का पैटर्न बदल गया था। झीलें सूख गई थीं या प्रदूषित हो गई थीं या फिर अतिक्रमण का शिकार हो चुकी थीं। हवा में प्रदूषण बढ़ता जा रहा था। उपभोक्तावाद तो मानो अपनी चरम सीमा पर था, अपशिष्ट प्रबन्धन की व्यवस्था तो एकदम दयनीय थी, और नागरिक चेतना का स्तर नीचे जा रहा था। बेंगलूरु किसी भी तरह भारत के किसी दूसरे शहर या

किसी अन्य विकासशील देश के बढ़ते हुए शहरों से अलग नहीं था।

मैंने सोचना शुरू किया : क्या यही है जो हम आने वाली पीढ़ियों के लिए छोड़कर जा रहे हैं? हम जो कर रहे हैं क्या वह न्यायोचित और टिकाऊ है? क्या हम नुक़सान को थोड़ा कम या उसकी कुछ भरपाई कर सकते हैं? व्यक्तिगत तौर पर मैं क्या कर सकती थी? इन बातों के जवाब मैंने अपने भीतर खोजने शुरू किए। कोई ऐसी जीवन शैली जो अधिक स्थायी हो? क्या उससे प्रकृति पर पड़ने वाला बोझ कम नहीं होगा? क्या हज़ारों साल से लोग धरती पर इसी तरह से नहीं रह रहे थे?

हमने सोचा कि एक कोशिश तो करनी ही चाहिए। अपने परिवार की मदद से जल्दी ही हमने छत पर कुछ जड़ी-बूटियाँ और सब्ज़ियाँ वगैरह उगानी शुरू कर दीं। एक बायो-गैस प्लांट भी लगा लिया जो गीले कचरे को खाना बनाने वाली गैस में बदलता था। एक गड्ढे में घर का कूड़ा इकट्ठा करके खाद बनानी शुरू कर दी। हमने बिजली बनाने के लिए एक

सोलर पैनल भी लगवाया। बारिश के पानी को इकट्ठा करना शुरू किया और यह सीखा कि जैव-एंजाइमों का इस्तेमाल कैसे करना है। घर में ऐसे क्लीनर इस्तेमाल करने बन्द कर दिए जो रसायनों से बनते थे। इन छोटी-छोटी चीज़ों से हमने न सिर्फ़ बाज़ार पर अपनी निर्भरता को घटाया बल्कि साथ-साथ कार्बन फुट-प्रिन्ट भी कम किए। अपनी इन छोटी-छोटी सफलताओं से प्रेरित होकर, अब मैं यह देखना चाहती थी कि क्या मैं दूसरों को भी ऐसी टिकाऊ जीवन शैली जीने में मदद कर सकती हूँ। और इस तरह से *सॉइल एण्ड सोल (Soil and Soul)* संस्था का जन्म हुआ!

सॉइल एण्ड सोल ने मुझे एक ऐसा मंच दिया जहाँ पर मैं ख़ुद को अभिव्यक्त कर सकती थी। जल्द ही मैंने स्थानीय समुदायों और यहाँ तक कि कॉर्पोरेट के लोगों से भी जुड़ना शुरू कर दिया। कई सारे ऐसे उत्पादों का जन्म हुआ जो पर्यावरण के अनुकूल थे। इस सारी यात्रा के दौरान मैंने यह महसूस किया कि टिकाऊ जीवन शैली के प्रति वयस्कों में जागरूकता और प्रेरणा की कमी है। सुख-सुविधा की आदत पर्यावरण के लिए हमारे सरोकारों पर भारी पड़ गई थी, जबकि बच्चों की सोच इससे ठीक उलट थी! बच्चों के साथ बातचीत के दौरान मैंने यह पाया कि उनमें इन विचारों के प्रति खुलापन होने के साथ-साथ घर के अन्दर बड़े बदलाव लाने की क्षमता भी है। लेकिन दुर्भाग्य की बात यही है कि कोई भी स्कूल इन बातों को पाठ्यक्रम के अन्तर्गत नहीं पढ़ाता है और न ही उनके बारे में कुछ सिखाता है।

यह महसूस करते हुए कि आने वाली पीढ़ियों में धरती के लिए

मैत्री भाव पैदा करना हमारे सामने एक सबसे महत्त्वपूर्ण काम है, मैंने सोचा कि हमारी शिक्षा प्रणाली की इस कमी को पूरा करने में शायद मैं कुछ मदद कर सकूँ। इस संकल्प ने हमें *सॉइल एण्ड सोल* में अपशिष्ट प्रबन्धन पर एक अनुभव आधारित मॉड्यूल विकसित करने का मौक़ा दिया। हमने उसे *'ज़ीरो वेस्ट कैम्पस प्रोग्राम'* (Zero Waste Campus Programme – ZWC) का नाम दिया। ZWC का यह एक साल का प्रोग्राम हर उस शिक्षण संस्था, स्कूल और कॉलेज के लिए है जो अपने संस्थान में उत्सर्जित कचरे का प्रबन्धन प्रभावी ढंग से करना चाहता है। इस प्रोग्राम को इस तरीक़े से तैयार किया गया है कि विद्यार्थियों और स्टाफ समेत सारे हितधारकों को इसमें शामिल किया जा सके। उद्देश्य बस यही है कि हर किसी को उसके द्वारा उत्सर्जित कचरे के प्रति ज़िम्मेदार और जवाबदेह बनाया जाए और वे ही उसका प्रबन्धन भी करें। इस प्रोग्राम के ज़रिए हम इस प्रकार के व्यवहार परिवर्तन का प्रयास करते हैं कि सभी के अन्दर इस विषय के प्रति अपनत्व और ज़िम्मेदारी की भावना जन्म ले जिससे एक टिकाऊ जीवन शैली की तरफ़ बढ़ने में मदद मिल सके।

सारे प्रोग्राम को चार प्रमुख मॉड्यूल में बाँटा गया है : *जागरूकता*, *ऑडिट*, *प्रबन्धन और जीवन्त एवं व्यावहारिक और संस्थागत प्रोजेक्ट*। सबसे पहले हम बच्चों को उनकी उम्र के लिहाज से अलग-अलग समूहों में बाँटते हैं और उनके साथ टिकाऊ जीवनशैली के बारे में जागरूकता पैदा करने करने के लिए काम करते हैं। उदाहरण के लिए – कैसे एक जागरूक और ज़िम्मेदार उपभोक्ता बनें? किसी विशेष उत्पाद का जीवन-चक्र क्या है? कचरा पैदा होना कहाँ से शुरू होता है, कहाँ जाकर उसका चक्र ख़त्म होता है और उससे क्या-क्या नुकसान होते हैं? *जागरूकता* का यह मॉड्यूल साल भर चलता है।

एक बार बच्चे जब इन बुनियादी बातों को समझ लेते हैं तो हम ऑडिट करवाने की प्रक्रिया शुरू करते हैं। इसमें पता लगाया जाता है कि स्कूल कितना कचरा पैदा करता है और उसके निपटारे के लिए हम किन तरीक़ों का इस्तेमाल कर सकते हैं। इससे कचरे के उत्सर्जन की मात्रा की एक बेसलाइन बनाने में

मदद मिलती है। हम कैम्पस के अन्दर और उसके आस-पास दोनों जगह कचरे के प्रबन्धन के लिए एक रूपरेखा तैयार करते हैं। इस प्रोग्राम के दौरान बच्चों को कचरे के उत्सर्जन को कम करने व प्रबन्धन करने के विभिन्न तरीक़ों के बारे में जागरूक किया जाता है। बच्चों द्वारा चलाए गए जीवन्त प्रोजेक्ट कार्यों के मूल्यांकन एवं सराहना के साथ प्रोग्राम समाप्त होता है। कुछ ख़ास उदाहरण इस प्रकार हैं : जड़ी-बूटियों का एक बगीचा बनाना, खाद और एंजाइम बनाने की इकाईयों का निर्माण करना, या फिर स्कूल में उत्सर्जित रद्दी को री-साइकल करने हेतु एक छोटी इकाई स्थापित करना।

एक प्रभावी ज्ञान-निर्माण के लिए हम कई तरह की शिक्षण प्रक्रियाओं का इस्तेमाल करते हैं। ऑडियो-विज़ुअल शिक्षण सामग्री की मदद से बच्चों की कल्पनाशक्ति को उभारा जा सकता है। एक और सिद्धान्त यहाँ पर बहुत उपयोगी है वह है किसी भी काम को खेल में बदल देना। कई तरह की सामूहिक गतिविधियों, सिमुलेशन, मस्ती और खेल से युक्त यह तरीक़े सुनिश्चित करते हैं कि इस प्रक्रिया में पूरी तरह से शामिल हैं और सीख भी रहे हैं। हम योग और प्रकृति से भी प्रेरणा हासिल करते हैं। वृक्षों को गले लगाना (hug-a-tree) और *संकल्प* लेने जैसे अभ्यास उन अवधारणाओं और विचारों को और भी मज़बूती देते हैं। *सॉइल एण्ड सोल* सारे साल की इस यात्रा का दस्तावेज़ीकरण करता है। इस यात्रा में हमें बहुत से दिलचस्प व्यवहार-परिवर्तन देखने को मिले, जैसे कि :

- बच्चों का अपने जन्मदिन पर सहपाठियों में चॉकलेट की जगह घर की बनी मिठाइयाँ/फल और सूखे मेवे वगैरह बाँटना।
- बच्चों का अपने माता-पिता पर इन बातों के लिए ज़ोर डालना कि वे प्लास्टिक के इस्तेमाल से बचें और खरीददारी के लिए घर से कपड़े की थैलियाँ लेकर जाएँ।
- प्लास्टिक की थैलियों से पर्यावरण पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों के बारे में दुकानदारों से बातचीत करना और उन्हें शिक्षित करना
- खरीददारी की छोटी सूचियाँ : बच्चों द्वारा अपनी वैकल्पिक पसन्द बताना।
- पैकेट-बन्द चीज़ें खरीदने के बजाए चीज़ों को ख़ुद बनाने के तरीक़ों को अपनाना। उदाहरण के लिए, बच्चों ने रसायन आधारित क्लीनर खरीदने के बजाए ख़ुद अपने जैव-क्लीनर बनाना सीखा।
- सक्रिय रूप से सुनना, सामूहिक चर्चा, अभिव्यक्ति, दृढ़ता, स्वामित्व (ownership) जैसे व्यावहारिक कौशलों के माध्यम से सम्पूर्ण व्यक्तित्व में निखार आना।

उपर्युक्त सुधार बहुत ही मामूली नज़र आ सकते हैं, लेकिन वास्तव में इनसे, बच्चों को उनके कामों से पर्यावरण पर पड़ने वाले असर के प्रति जागरूक करने का बड़ा मक़सद हासिल होता है।

इन बदलावों को लाना आसान नहीं था। प्रोग्राम के हर पड़ाव पर हमें हर किसी को राज़ी करना पड़ा। विभिन्न राज्यों के अनेक स्कूलों, जिनमें कई अन्तर्राष्ट्रीय स्कूल भी थे, के साथ बातचीत के दौरान हमने यह पाया कि इस तरह की अवधारणा पर किसी को राज़ी करना आसान नहीं होता।

सबसे पहली बात तो यही है कि ज़्यादातर स्कूलों को तो यह लगता ही नहीं कि पर्यावरण की ऐसी किसी शिक्षा की ज़रूरत है जो सिर्फ़ किताबों पर आधारित न होकर, असल जीवन और अनुभवजन्य ठोस बदलावों से जुड़ी हो। मुख्यधारा के यह स्कूल कक्षा में दी जाने वाली शिक्षा पर ही निर्भर रहते हैं और उनका सारा ध्यान बस किताबी ज्ञान पर ही केन्द्रित होता है। मैनेजमैंट की प्राथमिकताएँ और पर्यावरण के बारे में जागरूकता और प्रतिबद्धता की कमी अनुभव आधारित शिक्षा के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावटें हैं। बेशक दूसरी तरह के स्कूल भी हैं जहाँ ऐसी शिक्षा की स्वीकार्यता है लेकिन वहाँ या तो मैनेजमेंट की सहमति नहीं होती या फिर उनके पास पर्याप्त फंड नहीं होता। बहुत सारे सरकारी और निजी स्कूल इस श्रेणी में आते हैं *सॉइल एण्ड सोल* ने हमेशा ऐसे स्कूलों की मदद की है और वहाँ पर बिना किसी व्यय के ही कार्यशालाएँ संचालित की हैं। तीसरी तरह के स्कूल वैकल्पिक स्कूल हैं जहाँ पर पहले से ही ऐसे कुछ क़दम उठाए गए हैं। जहाँ पर विद्यार्थी और शिक्षक दोनों का ही झुकाव प्रयोग करने और सीखने की तरफ़ है। ऐसे स्कूलों के साथ हमारे जुड़ने और काम करने की सम्भावनाएँ ज़्यादा हैं।

हमने देखा है कि शहरी स्कूलों और बच्चों के मुक़ाबले ग्रामीण क्षेत्र के स्कूल और बच्चे ऐसे कार्यक्रमों के प्रति ज़्यादा सक्रिय और उत्साहित रहते हैं। कई सरकारी स्कूलों में बच्चों को पर्यावरण, संरक्षण और कचरा-प्रबन्धन जैसे विषयों के बारे में शिक्षित करने के लिए स्वैच्छिक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, सिक्किम में बच्चों को यह सब सिखाया जाता है और वहाँ इस मामले में अधिक जागरूकता है। आमतौर पर देखें तो पर्यावरण की शिक्षा के बारे में माता-पिता का दृष्टिकोण बदल रहा है, लेकिन वह चाहते हैं कि स्कूल ही इस बारे में बुनियादी शिक्षा प्रदान करें।

अगर स्कूल हमारे प्रोग्राम को संचालित करने के लिए सहमत हो जाता है तो चीज़ें काफ़ी आसान हो जाती हैं। हमें इस बात पर पूरा यकीन है कि अगर हमारे इरादे नेक हैं तो नतीजे ख़ुद-ब-ख़ुद बोलते हैं। मैं अक्सर कहा करती हूँ कि बच्चे स्पंज की

तरह होते हैं, उनमें किसी भी चीज़ को आत्मसात करने की क्षमता होती है- बशर्ते कि हम अपने विचारों को असरदार ढंग से उन तक पहुँचा सकें। मेरी राय में तो वे बदलाव के सबसे अच्छे एजेंट हैं। इस मामले में एक मिसाल ग्रेटा थनबर्ग की है, जो जलवायु परिवर्तन पर काम करने वाली एक किशोर उम्र की कार्यकर्ता है और जिसके काम का प्रभाव पूरे यूरोप, अमरीका और आस्ट्रेलिया में फ़ैल रहा है। हज़ारों बच्चों के साथ मिलकर वह नीति-निर्माताओं को धरती के बढ़ते हुए तापमान के मुद्दे पर तेज़ी से काम करने के लिए दबाव बना रही है। इससे पहले कि बहुत देर हो जाए भारत को भी इस मामले में कुछ क़दम उठाने की आवश्यकता है। इस बात की ज़रूरत है कि हमारी युवा पीढ़ी यथास्थिति पर सवाल उठाए और पर्यावरण प्रबन्धन के मामले में देश को आगे ले जाने की दिशा में अपना योगदान दे।

जब मैं भारत में अपशिष्ट प्रबन्धन को देखती हूँ तो मुझे उसमें बहुत सारी दिक़्क़तें नज़र आती हैं। सबसे पहले तो यह रवैया कि मैं जो कचरा पैदा करता हूँ वह मेरी ज़िम्मेदारी नहीं है। इसे बदलना होगा। हम जो कचरा पैदा करते हैं उसकी ज़िम्मेदारी हमारी है। आज हमारे महासागरों में पागलपन की हद तक प्लास्टिक का कचरा फेंका जा रहा है, हमारी नदियाँ, झीलें और पानी के दूसरे स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं। बढ़ती हुई सम्पन्नता ने उपभोक्तावाद को दीवानगी की हद तक हवा दी है, जिसका नतीजा अनावश्यक कचरे के ढेर हैं, जो हर तरफ़ नज़र आते हैं। पहाड़ों, रेगिस्तानों और जंगलों तक को नहीं बख्शा जा रहा है। वैश्विक जलवायु परिवर्तन एक वास्तविकता है। हालाँकि हर किसी के लिए कार्बन-मुक्त जीवन शैली में जीना शायद व्यावहारिक न हो, लेकिन बेतहाशा बढ़ रहा कचरा और पर्यावरण तो सभी की चिन्ता का विषय होना ही चाहिए। हम एक टाइम-बम पर बैठे हैं जिसका कांटा तेज़ी से घूम रहा है। सिर्फ़ जागरूकता और बड़े पैमाने पर समयबद्ध तथा विश्वसनीय क़दम ही देश और दुनिया को बचा सकते हैं।

कचरा प्रबन्धन के साथ ही *सॉइल एण्ड सोल* की तरफ़ से भोजन, ऊर्जा और पानी से जुड़े कार्यक्रम भी संचालित किए जाते हैं। परियोजनाओं का स्वरूप अलग-अलग संस्थाओं में, उनके अपने चुनाव के हिसाब से तय होता है। उदाहरण के तौर पर 'अपना भोजन ख़ुद उगाएँ', 'स्कूल को अक्षय ऊर्जा (Renewable Energy) के स्रोत में बदलना', जल-प्रबन्धन प्रणाली' जैसे कुछ प्रोजेक्ट के नाम लिए जा सकते हैं। हम उनके सुझावों का खुले मन से स्वागत करते हैं और उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप अपने प्रोग्राम को ढालते और स्वरूप देते हैं। ज़ाहिर है कि प्रत्येक प्रोग्राम उनके अनुभवों को और भी समृद्ध बनाता है और वहाँ जो सीखा जाता है वह जीवन भर के लिए होता है।

सॉइल एण्ड सोल में हम सिर्फ़ मुद्दों पर ही ध्यान केन्द्रित करने के बजाय नवाचारी और सरल हल भी खोजने की कोशिश करते हैं जो रोज़ाना की चुनौतियों का सामना कर सकें। हमारे उत्पाद पूरी तरह से प्राकृतिक, हाथ के बनाए हुए और टिकाऊ हैं। उन्हें बेचकर जो भी रकम इकट्ठी होती है उसी से हम देश भर में विभिन्न समुदायों के साथ मिलकर काम करते हैं और समाज में एक बेहतर बदलाव लाने की अपनी कोशिशों को आगे बढ़ाते हैं।

शिक्षा के मुद्दे पर जो भी काम हमने किया है, उससे सन्तुष्ट होने के बावजूद, मैं अपने आपको हमेशा एक बड़ी ज़िम्मेदारी की याद दिलाती रहती हूँ कि हमें ज़्यादा-से-ज़्यादा बच्चों और समुदायों तक पहुँचना है। मेरा सपना एक दिन एक ऐसा कैम्पस बनाने का है जो बच्चों को इस काबिल बनाए कि वे पर्यावरण के मामले में हमारी अगुवाई कर सकें।

कौन जानता है, हो सकता है कि यह दिन बहुत दूर न हो...!

प्रीति राव बेंगलूरु की एक पर्यावरण-उद्यमी हैं। वे *सॉइल एण्ड सोल* की संस्थापक हैं, जो कि एक ऐसी संस्था है जो टिकाऊ विकास के बारे में जागरूकता लाने के काम में जुटी हुई है। प्रीति एक शिक्षार्थी हैं, टिकाऊ जीवन शैली को जीती हैं, योग शिक्षिका हैं और कराटे की ब्लैक बैल्ट होल्डर भी हैं। प्रीति को यात्रा करना और शिक्षण बहुत पसन्द है। उनसे priti@soilandsoul.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : बलराम बोधि **पुनरीक्षण** तथा **कॉपी एडीटिंग :** स्वाति भदौरिया